आपबीती

मैं अपने जीवन के लिए लड़ी...और जीती भी

सुहेला अब्दुलालि

तीन साल पहले मेरा सामूहिक बलात्कार हुआ था, मैं 17 वर्ष की थी। मैं बम्बई में पली थी, आजकल यूसए में पढ़ती हूं। बलात्कार पर थीसिस लिख रही हूं जिस पर शोध करने के लिए घर लौटी हूं। उस दिन से आज तक बलात्कार से जुड़े पूर्वाग्रहों से मैं जूझती आई हूं। बार-बार लोगों ने इशारे से कहा है कि अपनी 'पवित्रता' खो देने से अच्छा था मैं मर जाती। पर मैं ऐसा नहीं मानती। मेरे लिए मेरा जीवन बेशकीमती है। मैं जानती हूं समाज के डर से कई औरतें चुप रहती हैं। पुरुष व स्त्री दोनों ही औरत को दोषी मानते हैं।

वह जुलाई की शाम थी। यह वही साल था जब महिला समूह बलात्कार के बेहतर क़ानूनों की मांग कर रहे थे। मेरा दोस्त राशिद और मैं अपने घर से करीब डेढ़ किलोमीटर दूर पहाड़ के किनारे बैठे थे। वहां दरांती लिए चार आदमियों ने हम पर हमला कर दिया। हमें मार-पीट कर पहाड़ के ऊपर चढ़ने को मजबूर किया और वहां करीब दो घंटे हमें बंद रखा। जैसे-जैसे रात ढली उन्होंने राशिद और मुझे अलग-अलग कर दिया। उसके बाद उन्होंने राशिद को कैदी बनाकर मेरे साथ बलात्कार किया। हमें धमकी दी कि कोई भी हरकत करने पर हमें सज़ा भुगतनी पड़ेगी। उनकी ये तरकीब कामयाब रही।

वे तय नहीं कर पा रहे थे कि हमें ज़िन्दा रखें या नहीं। मैं हर हाल में जीना चाहती थी। पहले मैंने ताकत से उनका सामना किया, फिर मनुहार की। मैंने प्यार, मानवता और इंसानियत की दुहाई दी। मैंने उनसे कहा कि अगर वे हम दोनों को ज़िन्दा छोड़ देंगे तो मैं उनसे अगले दिन वापस आकर मिलूंगी। इस बात की मुझे बहुत बड़ी कीमत चुकानी पड़ी, पर हम दोनों की ज़िन्दगी बच गई। ऐसा लग रहा था कि मैं एक लम्बे अर्से से यातना झेल रही हूं। मेरे साथ करीब दस बार बलात्कार किया गया। पर मैं इतनी तकलीफ़ में थी कि मुझे पता ही नहीं चल रहा था कि मेरे साथ क्या हो रहा था। फिर मुझे छोड़ दिया गया, एक लम्बे भाषण के बाद कि मैं कितनी चरित्रहीन लड़की हूं जो एक लड़के के साथ अकेली घूम रही हूं। इस बात से वे बेहद नाराज़ थे। अपनी कट्टर आत्म-धार्मिकता के चलते वे मुझे सबक सिखाना चाहते थे।

हमें पहाड़ के नीचे ले जाकर उन्होंने हमें जाने दिया। एक दूसरे को सहारा देते हम गिरते-संभलते चलते रहे। वे दरांती लहराते हमारे पीछे-पीछे आते रहे। सबसे अधिक खौफ़नाक बात यही थी— रिहाई हमारे सामने थी और मौत पीछे। हम घर पहुंचे टूटे-फूटे, बिखरे और हताश।

हालांकि मैंने वादा किया कि किसी से इस हादसे का ज़िक्र नहीं करूंगी, पर घर पहुंचते ही मैंने पापा से पुलिस को फ़ोन करने के लिए कहा। वे परेशान थे पर मैं नहीं चाहती थी कि किसी और के साथ ऐसा हो। पुलिसकर्मी असंवेदनशील और अपमानजनक थे। वे मुझे दोषी महसूस कराने की कोशिश कर रहे थे। जब मुझसे पूछा गया कि क्या हुआ था तो मैंने बेझिझक सब कुछ साफ़-साफ़ बयान कर दिया। वे अवाक थे कि मैं शर्मसार नहीं थी। उन्होंने कहा, पब्लिसिटी होगी।

मैंने कहा, कोई बात नहीं। कहा मुझे संरक्षण केन्द्र भेजा जाएगा। तब भी मैंने कहा मुझे ऐतराज़ नहीं। मैं सोच ही नहीं सकती थी कि इस घटना के लिए राशिद या मैं ज़िम्मेदार थे। अपने बलात्कारियों को सज़ा दिलाने के लिए मैं किसी भी हद तक जा सकती थी।

मुझे जल्दी ही पता चल गया कि क़ानूनी तंत्र में औरतों के लिए कोई न्याय नहीं है। जब हमसे पूछा गया कि हम रात को पहाड़ी पर क्या करने गए थे तो मुझे झुंझलाहट हुई। जब राशिद से पूछा कि वह चुप क्यों रहा तो मैं चीख पड़ी। मेरे कपड़ों और राशिद के शरीर पर यातना के कोई चिन्ह क्यों नहीं है? इन सवालों पर मैं खौफ़ और पीड़ा से टूट गई। पुलिस को यह समझ क्यों नहीं आ रहा था कि हमारे हालातों में हम मजबूर थे। मेरे पिता ने उन्हें चले जाने को कहा। पुलिस ने आरोपियों पर कोई इल्ज़ाम नहीं लगाए। "हम घूमने गए थे और लौटने में देर हो गई थी, इसलिए पुलिस को खबर दी गई थी।" यह दलील लिखकर केस खत्म कर दिया गया।

आज तीन साल हो गए हैं, पर एक दिन भी ऐसा नहीं बीता जब इस हादसे की याद ने मुझे डराया न हो। असुरक्षा, अरक्षितता, गुस्सा, खौफ़, बेबसी— मैं हर पल इनसे संघर्ष करती हूं। सड़क पर चलते-चलते, अपने पीछे कदमों की आहट सुनकर मेरे पसीने छूट जाते हैं और चिल्लाने से बचने के लिए मैं अपने होंठ काट लेती हूं। दोस्ती भरे स्पर्श से मैं सिकुड़ जाती हूं। आदमियों की आंखों में वासना तैरती देखकर मैं सहम जाती हूं।

पर इसके बावजूद मैं खुद को बहुत सशक्त महसूस करती हूं। मैं जानती हूं कि हर दिन जीवन का एक तोहफ़ा है और कोई भी नकारात्मक रवैया मुझे खुशहाल रहने से रोक नहीं सकता। आज मैं अपने जीवन को और अधिक संभालकर रखती हूं।

मैं पुरुषों से नफ़रत नहीं करती। यह करना बहुत आसान है पर वे तो खुद ही अलग-अलग दमन के शिकार हैं। मैं पितृसत्ता से नफ़रत करती हूं। और उन झूठों से जो कहते हैं पुरुष औरतों से श्रेष्ठ हैं, और उनके अधिकार ज़्यादा हैं हम औरतों से। मेरी नारीवादी दोस्त समझती हैं कि मेरा बलात्कार हुआ था इसलिए मैं महिला मुद्दों की बात करती हूं। पर बलात्कार तो उन सभी कारणों की एक अभिव्यक्ति थी कि मैं नारीवादी क्यों हूं। बलात्कार को एक खाके में बंद क्यों किया जाए? क्या अनचाहे संभोग को ही बलात्कार कहा जा सकता है? क्या रोज़ सड़क पर हमें घूरने वाले, हमें यौन वस्तु की तरह देखने वाले, हमारे हक़ छीनने वाले, हमारा दमन करने वाले, हमारा बलात्कार नहीं करते?

जब तक औरतें तरह-तरह से दमन का शिकार होती रहेंगी तब तक हम बलात्कार से असुरक्षित रहेंगे। हमें अपने चारों तरफ इसकी मौजूदगी को स्वीकारना होगा, इसके विभिन्न रूपों को समझना होगा। यह एक अपराध है और बलात्कारी अपराधी। पर सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि आज मैं ज़िन्दा हूं। मेरे लिए जीवित होना बहुत मायने रखता है। जब किसी को मौत का खौफ़ दिखाकर लूटा जाता है तब उसे दोषी क्यों नहीं समझा जाता? पर बलात्कार होने पर उससे पूछा जाता है उसने विद्रोह क्यों नहीं किया क्या, उसे मज़ा आया क्या? आखिर क्यों?

हमें बलात्कार को देखने का नज़रिया बदलना होगा। यह दूसरी औरतों की समस्या नहीं है। हम सबकी है। बलात्कारी हमारा पड़ोसी या कोई पागल या कोई चाचा, मौसा, दोस्त कोई भी हो सकता है। जब तक दुनिया में सत्ता संबंध असमान रहेंगे और पुरुष औरत को अपनी जागीर समझते रहेंगे, बलात्कार के डर में हम जीते रहेंगे और दण्डाभाव बना रहेगा।

मैं एक उत्तरजीवी हूं। मैंने बलात्कार की चाह नहीं रखी थी, न ही मुझे इसमें आनन्द आया था। ये मेरे जीवन की सबसे बुरी यातना थी। बलात्कार औरत की गलती नहीं है। इस लेख के ज़रिए मैं उस चुप्पी को तोड़ने का प्रयास कर रही हूं और उन मिथकों को तोड़ रही हूं जो हम अपने इर्द-गिर्द यह तसल्ली देने के लिए गढ़ लेते हैं कि हम संभावित पीड़ित नहीं हो सकते, और ऐसा करके हम बलात्कार के पीड़ितों को एक ऐसे दर्दनाक अकेलेपन से जूझने को मजबूर कर देते हैं जिसकी हम कल्पना भी नहीं करना चाहते। ”

यह लेख सन् 1983 में मानुषी में छपा था। आज सुहेला लिखती, पढ़ती और घूमती हैं। वे कहानियां कहती हैं और पेड़-पौधों के साथ समय बिताती हैं।